ग्रामीण महिला : दशा एवं दिशा

डॉ. विद्यानन्द पाण्डेय
बु.शि.प्र.म.वि. गांधी विधा मन्दिर
सरदारशहर, राजस्थान

सार:

ग्रामीण शब्द का अर्थ पिछड़े, अशिक्षित एवं सुविधाहीन समाज में रूढ़ हो गया है। इसलिए कभी–कभी गांव का व्यक्ति गंवार (सीधा सादा तथा मूर्ख) के रूप में परिभाषित हो जाता है उसका कारण है कि प्राचीन काल से अब तक भारतीय गांव सुविधा और विकास की दृष्टि से पूर्णतया ओझल थे। स्वतंत्रता के बाद धीरे–धीरे हम प्रगति करते गये परन्तु भारत के वे गॉधीवादी गांव आज भी गंवारों की टोलियों के उपाश्रय ही बने हुए है । ऐसा क्यों ? ऐसी बाते, ऐसे प्रश्न हमे अपने समाज के एक विशेष हिस्से की ओर देखने के लिए विवश करते है जो ग्रामीण महिलाओं की उस प्रकृति को रेखांकित करता ह

प्रस्तावना

ग्रामीण शब्द का अर्थ पिछड़े, अशिक्षित एवं सुविधाहीन समाज में रूढ़ हो गया है। इसलिए कभी–कभी गांव का व्यक्ति गंवार (सीधा सादा तथा मूर्ख) के रूप में परिभाषित हो जाता है उसका कारण है कि प्राचीन काल से अब तक भारतीय गांव सुविधा और विकास की दृष्टि से पूर्णतया ओझल थे। स्वतंत्रता के बाद धीरे–धीरे हम प्रगति करते गये परन्तु भारत के वे गॉधीवादी गांव आज भी गंवारों की टोलियों के उपाश्रय ही बने हुए है अनेक गांव आज भी उस स्थिति में है जहॉ आधुनिक युग की उन्नत तकनीक नहीं पहुॅच पाई है । गांव की अधिकाशं जनसंख्या सुविधा तथा संसाधन के अभाव में अशिक्षा, बेरोजगारी, गरीबी, भुखमरी, बीमारी नशाखोरी की भेंट चढ रही है। गावं का बालक शैशव से सीधे वृद्धावस्था में प्रवेश कर जाता है । उसका बालमन अभावों की कहानी सुनते–सुनते इतना परिपक्व हो जाता है कि उसे जीवन की सारी पीड़ा और यातनाएं नैसर्गिक उपहार लगने लगती हैं । उन अभावां को वह ईश्वर प्रदत्त मानकर अपने व्यक्तित्व में ढाल लेता है और जीवन पर्यन्त उसी की उपासना करते करते यह न्यास अपनी आगामी पीढी को सौंप देता है ।

ऐसा क्यों ? ऐसी बाते, ऐसे प्रश्न हमे अपने समाज के एक विशेष हिस्से की ओर देखने के लिए विवश करते है जो ग्रामीण महिलाओं की उस प्रकृति को रेखांकित करता है जहॉ आज भी देहरी के दीपक को आंचल की छांव में रखने वाली भाग्यलक्ष्मिओं का ज्ञात नहीं रहता कि कहीं वह तुम्हारे लाज–लावण्य की सुघड़ता में दावानल न बन जायें। मैं उन भारतीय ग्रामीण महिलाओं की बात करना चाहता हूॅ जो इतिहास, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, साहित्य, नीतिशास्त्र के माध्यम से भारतीय संस्कृति को मूर्त रूप तो देती है पर उनकी भौगोलिक एवं प्राकृतिक रूप रेखा पर कम विचार किया गया है। उसका कारण है – भारतीय समाज में महिला आज भी बौद्धिक जड़ता, रूढ़िवादिता, अंधविश्वास के कारण बाल विवाह, दहेज, शोषण, बलात्कार का सहज शिकार हो जाती है ।

चूंकि ग्रामीण जीवन शैली की अपनी एक विशिष्ट चादर होती है जिसके भीतर रहने वाली महिला को भारतीय संस्कृति की प्राण–प्रतिष्ठा समझा जाता है, जहॉ शील और संकोच का आदर्श संरक्षित होता है, त्याग तथा सेवा का निर्झर बहता है, ममता, दया, करूणा एवं वात्सल्य के महा सागर में लहरे किलोल करती है उस मानवीय जीवन दर्शन के यात्रा में महिलाएं भी एक पथिक है। दुर्भाग्य से हमने नारी जाति के साथ दासी, सेविका, से अलग जाकर किसी अन्य सामाजिक सम्बंधों को नहीं जोड़ा । नारी सृष्टि का एक रूप है चाहे वह ग्रामीण हो या शहरी । ग्रामीण महिला अभावों के संसार में रहकर भी अपने सेवा त्याग एवं वात्सल्य के अक्षय पात्र को कभी रिक्त नहीं होने देती ।

आज ग्रामीण महिला के विकास और उत्थान हेतु अनेक योजनाएं, सुविधाएं तथा अधिकार दिये जा रहे है किन्तु पुरूष सत्ता प्रधान समाज में अभी भी अपने पीठ पर बंदूक रख कर शिकार करने की आजादी वह दूसरों को सौंपती जा रही है। आखिर वह भारतीय जो ठहरी। भारतीय ग्रामीण महिला का पूरा अस्तित्व सदियों से घूंघट, पर्दा, और मकान की चार दोवारी के भीतर रहने का अभ्यस्त हो चुका है। वह बाहरी दुनिया में आते ही शोषकों की गिद्ध दृष्टि का शिकार हो जाता है। भारतीय संस्कृति में नारी को पत्री, पत्नी एवं मॉ के अतिरिक्त अन्य पवित्र संबन्धों से संबोधित नहीं किया जाता परन्तु उन्हे पिता, पति, और संतान द्वारा संरक्षण दिया जाना भी आवश्यक होता है और आज भी वह इस संकोच से मुक्त नहीं हो पाई है जिससे आत्म निर्भरता तथा आत्म विस्तार के धरातल पर उसके पैर टिक नहीं पा रहे हैं। विशेष कर ग्रामीण महिलाएं इस कुंठा और आत्म प्रवंचना का शिकार अधिक हैं।

भारतोय संविधान द्वारा महिलाओं को सुविधा, स्वतंत्रता एवं उनके विकास हेतु पर्याप्त अवसर दिये गये हैं परन्तु वे नगर तथा शहर की भव्यता तक ही सीमित हो गये हैं। ग्रामीण महिलाओं की दशा आज भी दयनीय है। 1929 में बाल विवाह निरोध अधिनियम बन जाने के बाद भी उसका लाभ ग्रामीण महिलाओं को नहीं मिल पा रहा है। ग्रामीण जनजीवन की धारणा में कुंवारे कन्यादान का लाभ लेने की काल्पनिक तथा मिथ्या भ्रान्ति आज भी बनी है। 1956 में पैत्रिक सम्पत्ति के अधिकार का अधिनियम बना परन्तु ग्रामीण महिला अपने पति के धर भूखों मर जाने मं गर्व और गौरव की अनुभूति से दबी जा रही है और पिता के परिवार की ओर उसके कदम नहीं बढ़ पा रहे है। 1961 में दहेज विरोधी अधिनियम तथा 1986 में दहेज हत्या अधिनियम आज भी अप्रासंगिक हो रहें है। इनका दुरूपयोग ग्रामीण क्षेत्रों में ही हो रहा है क्योंकि ग्रामीण महिलाएं पति द्वारा प्रताड़ित होते हुए भी लज्जा, शील, संकोच के कारण अपनी वेदना को अभिव्यक्ति नही दे पाती उनके लिए अहिल्या और अनुसूया में अंतर नहीं है। 1991 में दहेज को पति 'अधिकार' न समझे इस दृष्टि से पारित विधेयक का आज कोई महत्व नहीं हैं। 1961 में पारित अधिनियम सवैतनिक प्रसूति अवकाश का लाभ ग्रामीण महिलाओं को नहीं मिल पा रहा है। गोद में दुधमुहे बच्चे को लेकर खेतों में काम करने की बाध्यता उनकी रोजी रोटी से जुड़ गई है। 1971 में गर्भपात की सुविधा का अधिकार उन्हे मिला परन्तु ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं के लिए यह उत्पीड़न बनता जा रहा है जहॉ अंधविश्वास ग्लानि, संकोच तथा अपरिपक्वता के दबाव में वे मॉ बनने लगती है। 1983 में बलात्कार अधिनियम को कड़ा किया गया परन्तु आज सूचना तंत्र इसकी उड़ाई जाने वाली धज्जियों के गवाह है जहॉ आज भी गामीण महिलाएं इस दुर्व्यवस्था की शिकार है।

इन सारी जड़ता, कुंठा तथा दुर्दशा का कारण ग्रामीण महिलाओं में व्याप्त निरक्षरता है। उन्हे न तो शिक्षा की सुविधा है न स्वतंत्रता है। विद्यालय और शिक्षिकाओं की कमी के कारण समाज का अधिकांश पुरूष वर्ग महिला को बाहर भेज कर शिक्षा दिलाने में डर का अनुभव करता है। ग्रामीण परिवेश में स्त्री को पराया धन माना जाता है और अज्ञानतावस बाल विवाह करके एक उत्तरदायी भविष्य के सुनहरे सपनों को असमय में ध्वस्त कर दिया जाता है। ग्रामीण परिवेश में शिक्षा का अभाव आज प्राईवेटाईजेशन से संधर्ष नहीं कर पा रहा है इसलिए ग्रामीण महिला शिक्षा तथा संसाधन के अभाव में विकसित नहीं कर पा रही है। उद्योगधन्धे तथा व्यापार एवं नौकरी की समस्याएं ग्रामीण विकास में बाधक हैं और ग्रामीण महिला धरेलू कार्य में फंस कर बाहरी दुनियां से कट जा रही है तथा गरीबी, निर्धनता एवं श्रमशोषण का शिकार बनती जा रही है।

हमारी सामाजिक, सांस्कृतिक एवं मनोवैज्ञानिक स्थितियां ऐसी है कि हम 21वीं सदी के भारत में रहते हुए ग्रामीण महिलाओं को काल्पनिक कथानको से जोड़कर अनुशासन के नाम पर उनकी स्वतंत्रता को प्रतिबंधित कर रहे हैं। हम सबको कल्पना चावला नही बना सकते यह मनोवृति लेकर चलते हैं और वैसा बनने का प्रयास भी छोड़ देते है। न्याय प्रणाली और राजनैतिक मनोवृति का प्रत्यक्ष उदाहरण है कि संसद में आज भी महिला आरक्षण विधेयक लम्बित है जबकि सांसद और विधायक प्रति दिन अपनी सुविधाएं बढ़ा रहे है। इन सब के बावजूद महिलायें आज भी अपनी सोच नहीं बदल पा रही है। ग्रामीण महिलाएं घूंघट और पर्दे के पीछे बैठकर जीवन की पीड़ा पी जाती है। उनके भीतर अंतरिक्ष की व्यापकता तथा महासागर की गंभीरता तो है पर अपनी ऊंचाई का बोध नहों होने के कारण वे आज भी सशक्तीकरण का उपागम नहीं बन पा रही है।

आधुनिक एवं वैज्ञानिक युग में भूमण्डल पर अन्य विकसित देशों के साथ हमे चलने के लिए ग्रामीण महिला को साथ लेना होगा, सोच बदलनी होगी, उन्हे अधिकार देना होगा, अंधविश्वास से दूर रहकर उनका शोषण रोकना होगा। उन्हे शिक्षा प्रदान करते हुए समाज की धारा में लाना होगा। ग्रामीण महिला के उन्नयन एवं सशक्तीकरण के लिए शिक्षा सोच, परम्परा, प्रथा, अंधविश्वास, गरीबी, बाल श्रमशोषण, कुंठा, दहेज, बाल विवाह आदि की रीति नीति को ईमान्दारी से परिभाषित करते हुए इनके विकास हेतु स्वस्थ वैचारिक धरातल बनाना होगा, जिस पर झोपड़ियों में पलने वाली भारतीय मर्यादा को राजमहलों का सुख दिया जा सके।